शिष्टाचार का महत्व

१९४१

चौधरी चरण सिंह

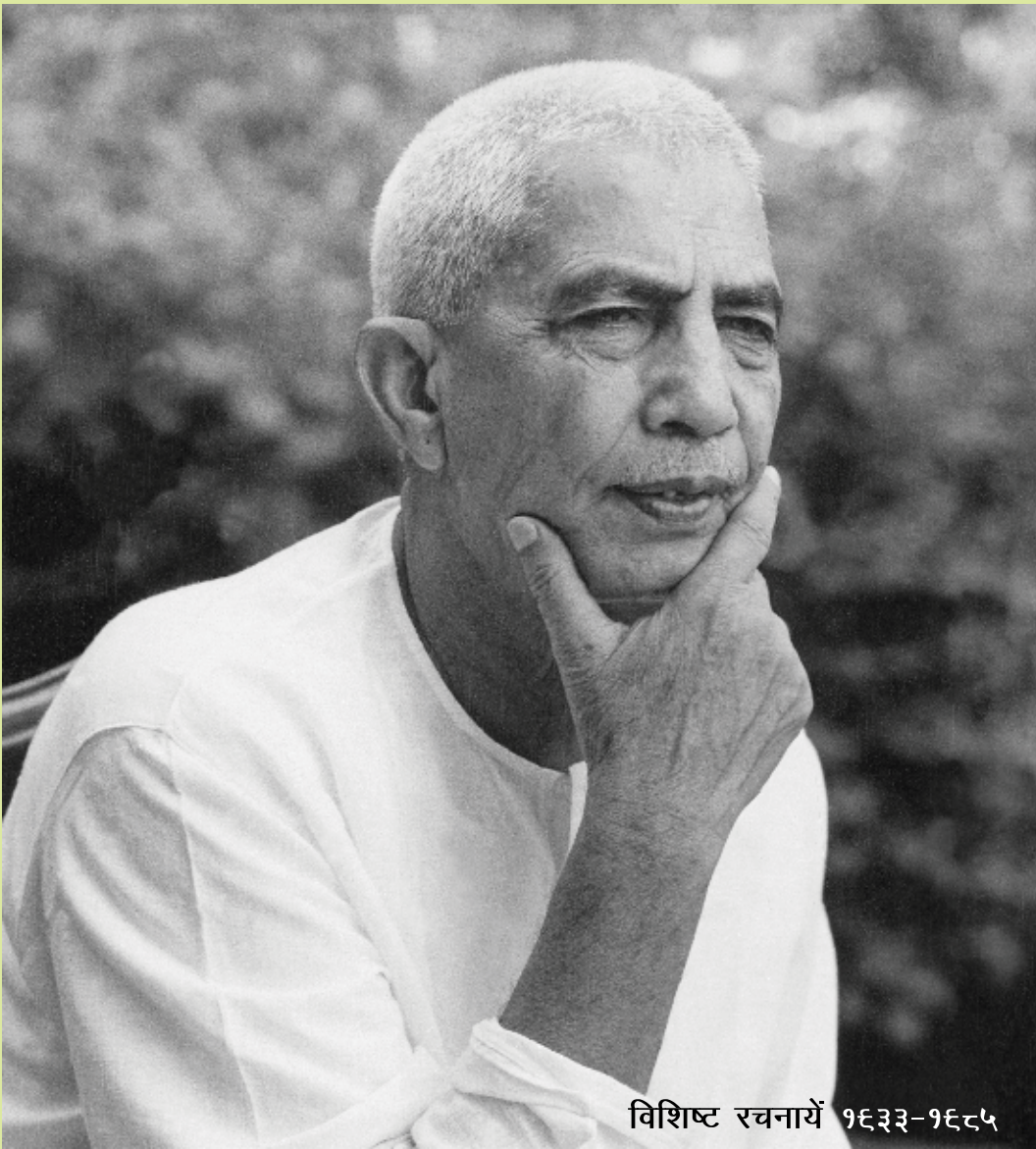

विशिष्ट रचनायें १९३३-१९८५

२६ जनवरी २०२२
चरण सिंह अभिलेखागार द्वारा प्रकाशित
www.charansingh.org
info@charansingh.org

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस प्रकाशन को केवल पूर्व अनुमति के साथ
पुनः प्रस्तुत, वितरित या प्रसारित किया जा सकता है।
अनुमति के लिए कृपया लिखें info@charansingh.org

अक्षर तथा आवरण संयोजन राम दास लाल
सौरभ प्रिंटर्स प्राइवेट लिमिटेड, ग्रेटर नोएडा, भारत द्वारा मुद्रित।

चरण सिंह के पिता मीर सिंह तथा माता नेत्र कौर, १९५०

चरण सिंह का जन्म २३ दिसंबर १९०२ को "एक साधारण किसान के यहां छप्पर छवाये मिट्टी की दीवारों से बने घर में हुआ था, जहां आंगन में एक कुंआ था, जिसका पानी पीने और सिंचाई के काम आता था।"* संयुक्त प्रांत (उत्तर प्रदेश) के मेरठ जिले के नूरपुर गांव में एक पट्टेदार गरीब किसान की कच्ची मढ़ैया में पैदा हुआ यह शिशु आज़ाद भारत में देहात की बुलंद आवाज बना।

* चरण सिंह के अपने शब्दों में

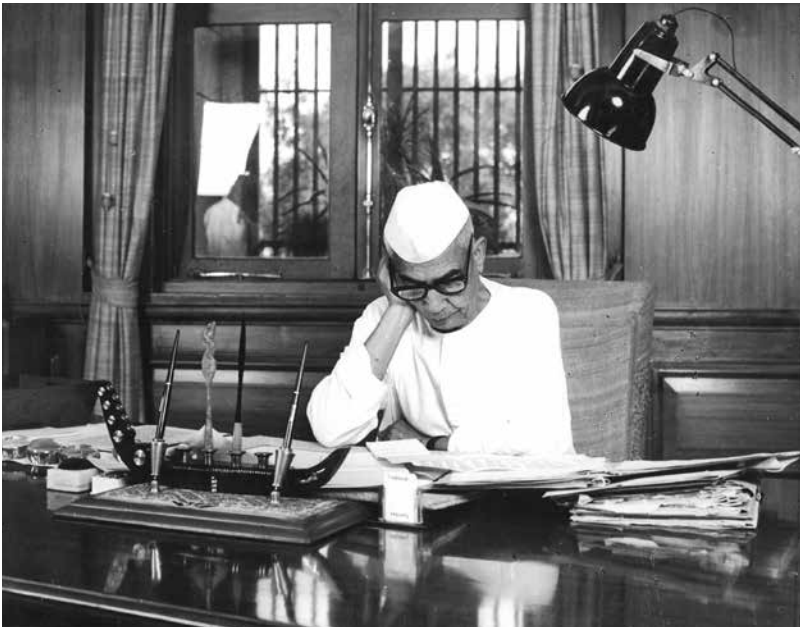

चौधरी चरण सिंह
भारत के प्रधान मंत्री। दिल्लीं, १९७९

ग्रामीण भारत के जैविक बुद्धिजीवी

१
शिष्टाचार का महत्व

भारतीय संस्कृति में शिष्टाचार का बहुत महत्व है। सामाजिक और घरेलू जीवन में कदम–कदम पर इसके अनुपालन पर ज़ोर दिया जाता है। यह बेहद सहज किन्तु गूढ़ विषय है। १९४१ में जब चौधरी चरण सिंह व्यक्तिगत सत्याग्रह के आन्दोलन के तहत एक राजनीतिक बंदी के तौर पर बरेली सेन्ट्रल जेल में थे, उस समय चौधरी साहब के बच्चे छोटे–छोटे थे। उन्हें शिष्टाचार की शिक्षा देते हुए उन्होंने कुछ पत्र लिखे थे, जिन्हें बाद में 'शिष्टाचार' शीर्षक के अन्तर्गत पुस्तक के रूप में प्रकाशित किया गया।

'शिष्टाचार' के प्रथम भाग के पहले अध्याय में बताया गया है कि शिष्टाचार क्या है तथा शिष्टाचार और सदाचार का क्या सहसम्बंध है।

'शिष्टाचार' एक सामासिक पद है, जो 'शिष्ट' और 'आचार' पदों के योग से बना है। 'शिष्ट' (शास+क्त) शब्द का अर्थ 'सभ्य' या 'सज्जन' है और 'आचार' (आ+चर भावे धञ्) का अर्थ है 'आचरण' अथवा 'व्यवहार'। अतः शिष्टाचार शब्द का अर्थ शिष्टों का आचार अथवा सभ्य लोगों का व्यवहार अथवा सज्जन व्यक्तियों का आचरण है। शिष्टाचार के अंतर्गत मनुष्य के सम्पूर्ण जीवन के प्रत्येक कार्य–उदाहरणार्थ उसका रहना–सहना, उठना–बैठना, चलना–फिरना, बोलना–चालना, सोना–जागना, नहाना–धोना आदि सभी आ जाते हैं। महर्षि दयानन्द ने शिष्टाचार की परिभाषा इस प्रकार की है:

"जो धर्माचरणपूर्वक ब्रह्मचर्य से विद्या ग्रहण कर, प्रत्यक्षादि प्रमाणों द्वारा सत्यासत्य का निर्णय करके सत्य का ग्रहण कर, असत्य का परित्याग करता है, वही 'शिष्टाचार' और जो इसको करता है वह 'शिष्ट' कहलाता है।"

इस परिभाषा के अनुसार, 'सदाचार' और 'शिष्टाचार' में कोई अन्तर

दिखाई नहीं पड़ता। परन्तु आजकज सामान्य बोलचाल में शिष्टाचार का तात्पर्य केवल उस व्यवहार से है जिसका प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष सम्बंध दूसरों के मान सम्मान, सुख–सुविधा और संतोष से हो तथा जो अन्य व्यक्तियों के लिए यथायोग्य स्नेह, प्रेम तथा श्रद्धा का परिचायक हो। शिष्टाचार का मूलाधार घर या बाहर कोई भी ऐसा काम न करना है, जिससे किसी की भावनाओं को ठेस पहंचे, या किसी को कोई दुःख अथवा क्लेश हो। दूसरे शब्दों में, हर भले आदमी को सामाजिक प्राणी होने के नाते दूसरों के साथ व्यवहार करते समय जिन नियमों का पालन करना आवश्यक है, उनका नाम शिष्टाचार है।

प्रत्येक मनुष्य को अपने जन्म–काल से ही अपने प्रत्येक कार्य अथवा आवश्यकता की पूर्ति के लिए दूसरों का आश्रय लेना पड़ता है। बिना सहायक के कोई व्यक्ति एक दिन भी सुख तथा सुविधा से नहीं रह सकता। बाल्यावस्था में मां–बाप लाड़–प्यार से बच्चे को पालते–पोसते हैं। तदनान्तर ज्यों–ज्यों उसकी आयु बढ़ती जाती है, त्यों–त्यों उसे दूसरे व्यक्तियों की सहायता अपेक्षित होती है। हम लोग जो कपड़े पहनते हैं, वे दूसरों ही ने बनाए हैं, जिस घर में हम रहते हैं, उसे भी औरों ने ही बनाया है। अन्य व्यक्ति ही हमारे भोजन के पदार्थ संग्रह करके रखते हैं। दूसरों का काम करके जैसे हम लोग जीविका प्राप्त करते हैं, वैसे ही दूसरे व्यक्ति भी हम लोगों का काम करके जीवन–निर्वाह करते हैं। शिक्षा के लिए शिक्षक और पाठशाला का आयोजन किया जाता है। इसी प्रकार वाणिज्य व्यवसाय में विविध देशवासियों के साथ व्यवहार करना पड़ता है, दैनिक जीवन में अपने धर्म, समाज और राजनियमों के अनुकूल चलना होता है, सुख–दुख में स्वजन, बंधुगण के साथ हर्ष या शोक मनाने की आवश्यकता पड़ती है। इन्हीं सब कारणों से हम लोग हमेशा ही एक–दूसरे का मुंह ताका करते हैं और परस्पर सहायता पाने की आशा रखते हैं। परिचित हों चाहे अपरिचित, शत्रु हों अथवा मित्र, धनी हों या दरिद्र, पंडित हों या मूर्ख, हम लोग समाज के सदस्य होने के नाते एक–दसरे के प्रति समभाव से ऋणी हैं। इस ऋण को समुचित रूप से चुकाने की क्रिया का नाम ही 'शिष्टाचार' है। देश, काल और पात्र के भेद से इस बाध्य बाधक, अन्योन्याश्रय भाव का ह्रास अथवा वृद्धि होती रहती है। कोई व्यक्ति जब किसी विशेष कारण से किसी के द्वारा विशेष उपकृत होता है, तब वह व्यक्ति अपने उस उपकारी के निकट अपेक्षाकृत अधिक कृतज्ञ या ऋणी होता है। उदाहरणार्थ माता–पिता व आचार्य का ऋण, दूसरों के प्रति जो हमारा कर्तव्य है, उससे कहीं और अधिक महान है। निष्कर्ष यह है कि दूसरों की भावनाओं और अधिकारों का मान व आदर करना केवल

सामाजिक व्यवहार का ही एक नियम नहीं है प्रत्युत यह वह आधारशिला है जिस पर समाज सदैव से स्थिर रहा है।

अब प्रश्न यह उठता है कि शिष्ट आचार की कसौटी क्या है? अर्थात् हम यह कैसे समझें कि हमें अमुक काम करना चाहिए अथवा नहीं। इस प्रश्न के समाधान के लिए 'हितोपदेश' में एक बड़ा ही उपयुक्त श्लोक आया है:

प्रत्याख्याने च दाने च सुखदुःखे प्रियाप्रिये।
आत्मौपम्येन पुरुषः प्रमाणमधिगच्छति।।

अर्थात् "दान देने में और न देने में, सुख में और दुःख में तथा प्रिय और अप्रिय कार्यों में पुरुष स्वयं अपनी उपमा से ही प्रमाण को जानता है।" अर्थात् शिष्टाचार का आधारभूत नियम केवल यही है कि:

आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत्।

मनुष्य कभी ऐसा काम न करे जो उसकी आत्मा के प्रतिकूल हो, अर्थात् वह अन्य के साथ ऐसा व्यवहार न करे कि वैसा ही व्यवहार यदि कोई उसके साथ करे, तो उसे बुरा लगे। शिष्टाचार–सम्बंधी अनेक अन्य उपनियम इस प्रधान नियम के निर्वाह के लिए ही बने हैं।

महान चीनी तत्त्ववेत्ता कन्फ्यूशस ने भी यही बात लगभग ढाई हजार वर्ष पहले दुहरायी थी: "दूसरों के साथ वैसा ही बर्ताव करो, जैसाकि तुम दूसरे से अपने लिए चाहते हो।" आचार्य चाणक्य की "आत्मवत् सर्वभूतेषु यः पश्यति स पण्डितः" नामक उक्ति से भी यही भाव प्रकट होता है।

अतः यदि आप दूसरों से सम्मान, सत्कार, उपकार, सेवा और सहायता की अभिलाषा रखते हैं तो पहले दूसरों के प्रति आप वैसा ही व्यवहार करें। किसी से मीठी बात सुनना चाहते हैं तो मीठी वाणी बोलें और यदि किसी की गाली नहीं सुनना चाहते हैं तो किसी को गाली न दें। यदि सभा में बैठकर दूसरों की बातचीत से आपके व्याख्यान सुनने में विघ्न पड़ता है तो स्वयं भी बातचीत न करें, जिससे दूसरों के सुनने में भी विघ्न न पड़े। इसी प्रकार किसी के घर जाकर यदि आप गृहस्वामी से आदर–सत्कार की आशा रखते हैं, तो जो आपसे भेंट करने आये उसका आदर–सत्कार करें।

शिष्टाचार की आवश्यकता स्वयंसिद्ध है। जो लोग अशिष्ट हैं, उनके साथ रहना बड़ा ही दुःखद होता है। इसके विपरीत शिष्ट आचरण से सारा संसार अपना मित्र बन सकता है। मनुष्य–समाज को सुखी बनाने की कितनी ही विधियां हैं: शिष्ट व्यवहार उन विधियों में एक विशेष स्थान रखता है। शिष्ट व्यवहार से समाज अथवा व्यक्ति को अपना कामकाज करने

का सुभीता रहता है। इससे समाज को व्यवस्था और शांति तथा व्यक्ति के मन को संतोष और आनंद प्राप्त होता है। नियम ही संगठन का प्राण है। नियमहीनता और स्वेच्छाचारिता का यदि बोलबाला हो जाए तो मनुष्य का व्यवस्थित सामाजिक जीवन कदाचित् एक दिन भी स्थिर न रहे।

अनेक भद्र व्यक्तियों की, जिनकी विद्या और योग्यता निर्विवाद है, यह धारणा है कि शिष्टाचार अनावश्यक, विधि–निषेधात्मक नियमों का एक संग्रह मात्र है, जिनका पालन एक व्यर्थ का बंधन है। उनका विचार है कि यदि मनुष्य के उद्देश्य कल्याणमय, संकल्प शुभ और मनोभाव भले हों, तो वे स्वयं ही उसके व्यवहार से प्रकट हो जाएंगे। ऐसे मनुष्य अपने आचरण के फूहड़पन, स्वर की कर्कशता, अशुद्ध भाषा, भद्दी चाल–ढाल, अहंकार अथवा आडम्बर से शिष्टाचार की अर्थात् उन सब नियमों, आदेशों और संकेतों की अवहेलना करते हैं जिन पर युग–युगांतर से समाज का ढांचा आधारित है। ऐसे व्यक्ति यह भूल जाते हैं कि उनका आचार–व्यवहार उनके मन और हृदय का प्रतिबिम्ब होना चाहिए। मनुष्य की विद्या और चरित्र की परीक्षा सभी काल में नहीं होती, परंतु उसका स्वभाव सभी काल में परखा जाता है। इस व्यस्त और व्यग्रतापूर्ण संसार में ऐसे मनुष्य बहुत कम हैं जो मनुष्यों के बाह्य व्यक्तित्व के धरातल के नीचे गोता लगाकर उसकी आंतरिक स्थिति का ज्ञान प्राप्त कर सकें। बहुधा लोग तो भौतिक वस्तुओं की भांति व्यक्तियों के सम्बंध में भी उनके बाह्य क्रिया–कलाप के आधार पर ही अपना मत निश्चित करते हैं। किसी के चरित्र की आंतरिक विशिष्टताएं तो कुछ समय बाद ही जानी जा सकती हैं किन्तु जीवन में घनिष्ठ संपर्क के लिए साधारणतया इतना समय मिलता ही कहां है! अधिकतर समय तो केवल शिष्टाचार मात्र में ही समाप्त हो जाता है। वास्तव में, हमारा आचार–व्यवहार ही वह प्रमाणपत्र है जिसको हम अपने जीवनपथ में, अनजाने में दूसरों के सामने प्रस्तुत करते हैं और जिसके द्वारा दूसरे व्यक्ति हमारे सम्बंध में प्रायः प्रारम्भिक मत स्थिर करते हैं और किसी निर्णय पर पहुंचते हैं।

शिष्टाचार एक महान गुण है तथा मनुष्यत्व का विशेष परिचायक है। इस गुण के प्रकाश से ही मनुष्य की शिक्षा, रुचि और संस्कृति का परिचय प्राप्त होता है। मनुष्य का आचार–व्यवहार एक प्रकार से उसकी कुलीनता का पैमाना है। सत्कुल में उत्पन्न व्यक्ति प्रायः शिष्टाचारी होते हैं। व्यक्ति–विशेष के संस्कार और उसकी आदतें उसके छोटे–छोटे कामों और उसके रहने–सहने के ढंग से ही मालूम होती हैं। दूसरे आदमी उसके व्यवहार से ही जांचते हैं कि उसने घर पर क्या सीखा है और उसके कुटुम्ब के आदमी कितने सभ्य हैं। निष्कपटता, खरापन, सरलता, सादगी, विनय और सेवाभाव शिष्ट शिक्षा–दीक्षा के द्योतक हैं

तथा राजा और रंक सब में अपना समान चमत्कार दिखलाते हैं। प्रत्येक ऐसा कार्य अथवा व्यवहार जिसमें बनावट व घमंड की गंध आती हो, असभ्यता तथा असंस्कृति का द्योतक है। निस्संदेह वह मनुष्य, जो दूसरों के भावों का सर्वथा आदर करता है, एक दम्भी व्यक्ति की अपेक्षा, चाहे वह कितना ही चतुर और विद्वान् क्यों न हो, कहीं अधिक सांसारिक अभ्युदय को प्राप्त होगा।

शिष्टाचारी व्यक्ति केवल अपने लिए ही अच्छा नहीं होता वरन् वह अपने कुल, जाति और देश की भी शोभा बनता है। ऐसे व्यक्ति के प्रति लोगों में श्रद्धा, विश्वास और आदर स्वभावतः ही उत्पन्न हो जाते हैं। शिष्टाचारी व्यक्ति अपने उदाहरण से दूसरे आदमियों को भी शिष्टाचारी बनाने की क्षमता रखता है। वह अपने पास उठने–बैठने वालों पर अप्रत्यक्ष रूप से अच्छा प्रभाव डालता है और इस प्रकार देश व समाज की उन्नति का कारण बनता है। भगवान् कृष्ण ने भी अर्जुन से गीता में कहा हैः

यद्यदाचरति श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरो जनः।
स यत्प्रमाणं कुरुते लोकस्तदनुवर्तते। अ० ३, श्लोक २१।

अर्थात् श्रेष्ठ व्यक्ति जो आचरण करता है उसे ही अन्य जन भी करते हैं, उसके किए हुए को प्रमाण मानकर लोग उसका अनुसरण करते हैं।

शिष्टाचार के नियमों का पालन तमाम सभ्य देशों में होता है। यही सभ्य और असभ्य व्यक्तियों के भेद का द्योतक होता है। बहुत से रीति–रिवाजों तथा व्यवहारों को, जिनका आज मान होता है, आने वाली पीढ़ियां भूल सकती हैं, परन्तु विनय, शिष्टता व सौजन्य के गुण न कभी भुलाए जा सकते हैं और न व्यर्थ ही माने जा सकते हैं। विभिन्न समाजों में इन नियमों के आकार–प्रकार तथा ब्योरे में अन्तर हो सकता है और समय की प्रगति के साथ वे बदलते भी रह सकते हैं, परन्तु शिष्टाचार की नींव अपरिवर्तनशील, सदा दृढ़, समरस तथा स्थायी बनी रहती है। उसके अधीन कुछ मौलिक नियमों का पालन अनंतकाल से होता आया है और भविष्य में भी होता रहेगा।

मनुष्य मात्र से सम्पर्क में आने के जितने भी प्रकार, अवस्थाएं और अवसर हैं, शिष्टाचार का ज्ञान उन सबके लिए अनिवार्य और उपयोगी है। अध्यापक हो या विद्यार्थी, दुकानदार हो या ग्राहक, जनता का सेवक हो या सभ्य साधारण, स्वामी हो या सेवक, गुरुजन हो या छोटा, नगर–निवासी हो अथवा ग्राम–निवासी, संन्यासी हो या गृहस्थ–प्रत्येक स्थिति में मनुष्य को दूसरों के साथ बर्ताव करना होता है। अतएव शिष्टाचार का विषय बहुत व्यापक है। इस गुण के प्रयोग करने के स्थल और अवसर इतने

अधिक हैं कि सभी अवस्थाओं के लिए पूरे–पूरे नियम बताना कठिन है। शिष्टाचार एक प्रकार की ललित कला है, जिसका अभ्यास शिष्ट व्यक्तियों की संगति में बैठने से होता है और जो किसी व्यक्ति के बचपन से लेकर आज तक के संस्कारों का केवल बाह्य रूप है।

शिष्टाचार को केवल विशेष अवसरों पर प्रयत्नपूर्वक प्रदर्शन की चीज न रहकर हमारे स्वभाव का अंग बन जाना चाहिए और यह तभी सम्भव है कि जब शिष्टाचार के नियमों का पालन मनुष्य को बचपन से ही कराया जाए। अंग्रेजी में एक कहावत हैः 'चाइल्ड इज द फादर ऑव मैन' (बालक मनुष्य का जनक है)। इसका वास्तविक अर्थ यही है कि जिस प्रकार पिता पुत्र को अपने आचरणों से प्रभावित करता है और पुत्र स्वतः पिता के गुण–दोषों को ग्रहण कर लेता है, उसी प्रकार 'बचपन' प्रौढ़ आयु की आधारशिला है। जिन अच्छी या बुरी आदतों का हम बचपन में अभ्यास कर लेते हैं वे जीवन का अंग बन जाती हैं। अतः प्रत्येक माता–पिता का कर्तव्य है कि वह घर में पग–पग पर बच्चों से ऐसा आचरण कराएं जैसे आचरण की वे सभ्य समाज में उनसे आशा रखते हैं। वे स्वयं भी उनके साथ ऐसा बर्ताव करें तथा ऐसा शिष्टाचार बरतें जैसा वे अन्य सभ्य व्यक्तियों के साथ बरतते हैं। यदि बच्चे गुरुजनों को आये दिन आपे से बाहर देखते हैं, उनके मुख से पराई निन्दा सुनते हैं अथवा उनको दूसरों के साथ अशिष्ट व्यवहार करते देखते हैं तो वे भी अपनी जीभ पर काबू न रख सकेंगे और न ही वे शांत स्वभाव वाले, क्रोधहीन एवं शिष्ट बन सकेंगे। जैसा आदर्श उनके सामने उपस्थित होगा वे उसी में ढल जाएंगे। अशिष्ट माता–पिता का अपनी संतान को शिष्टोपदेश करना समय नष्ट करने के बराबर होगा, क्योंकि कोई बच्चा कभी ऐसे उपदेश को ग्रहण नहीं करेगा जिसके अनुकूल वह स्वयं उपदेष्टा को आचरण करते नहीं देखता। अतएव यह परमावश्यक है कि बालकों के सामने मां–बाप, अध्यापकगण और समाज के प्रमुख व्यक्ति अपने आपको उन गुणों का नमूना बनकर दिखायें जिन गुणों को वे बालकों में उत्पन्न कराना चाहते हैं।

सदाचार और शिष्टाचार

पाठक पूछ सकते हैं–सदाचार और शिष्टाचार में क्या अंतर है? शाब्दिक अर्थ तो दोनों का प्रायः एक ही है, परन्तु जैसा ऊपर संकेत किया जा चुका है, आम बोल–चाल में दोनों के भाव में बहुत अंतर है। सदाचार सर्वत्र और सर्वदा सबके लिए अटल आदर्श है, परन्तु शिष्टाचार में देश, काल और पात्र के अनुसार परिवर्तन हो सकता है। उसका थोड़ा–बहुत

उल्लंघन भी हो सकता है। सदाचार की अवहेलना से भयंकर आत्मिक परिणाम निकल सकते हैं, पर शिष्टाचार के अभाव में सहसा वैसा नहीं हो सकता। सदाचार में मन, वचन और कर्म की एकता आवश्यक है, परन्तु शिष्टाचार का पालन मन के बिना अर्थात् केवल वचन और क्रिया से भी हो सकता है। उदाहरणार्थ, सदा सत्य बोलना सदाचार है, यह नियम त्रिकाल में एक–सा महत्त्व रखता है तथा देश, काल या पात्र के भेद से इसमें कोई परिवर्तन नहीं आ सकता। किसी से कटु सत्य भी न कहो, यह शिष्टाचार का नियम है, परन्तु गुरुजन छोटों को कटु उपदेश भी देते हैं। जो मनुष्य असत्य आचरण करेगा उसकी आत्मा मलिन और अपवित्र हो जाएगी और उसको कभी सच्चा आनंद नहीं मिल सकता। परन्तु जो कड़वा सत्य बोलेगा, उससे लोग सहज में अप्रसन्न तो हो सकते हैं, लेकिन उससे उसकी अधिक कोई हानि नहीं होगी। जो मनुष्य सत्यवादी नहीं है, पर सत्यवादी और सदाचारी बनने का दिखावा मात्र करता है, वह न तो सदाचारी हो सकता है, न कहा जा सकता है, परन्तु ऐसे व्यक्ति के शिष्टाचारी होने में कोई बाधा नहीं है।

यह लिखने की आवश्यकता नहीं कि यद्यपि शिष्टाचार का पालन सभ्य जीवन का एक आधार है और उसमें तथा सदाचार में कोई विरोध नहीं है परन्तु सदाचार का स्थान शिष्टाचार से ऊपर है। शिष्टाचार का व्यतिक्रम तो क्षम्य हो सकता है, लेकिन सदाचारहीनता अथवा दुराचार की अपेक्षा नहीं की जा सकती। शिष्टाचार के अभाव में मनुष्य केवल सभ्य कहलाता है, लेकिन सदाचार के अभाव में तो वह मनुष्य कहलाने का ही अधिकारी नहीं रहता। अतएव स्पष्ट है कि अशिष्ट सदाचारी व्यक्ति दुराचारी शिष्ट की अपेक्षा कहीं अधिक अच्छा है।

साथ ही, यह भी निर्विवाद है कि शिष्टाचार वस्तुतः सदाचार का पूरक है। सदाचारी व्यक्ति यदि शिष्टाचारी भी हो तो सोने के साथ सुहागे का मेल हो जाता है। अंग्रेज लेखक स्टार्क ने इस सम्बंध में कितना उचित कहा है–

> "Manners are like the cipher in arithmetic; they may not be much in themselves, but they are capable of adding a great deal to the value of everything else."
>
> —Freya Stark in '*The Journey's Echo*.'

अर्थात् "शिष्टाचार अंकगणित में शून्य के समान है, चाहे वह स्वतः अधिक मूल्य न रखता हो, किंतु वह प्रत्येक अन्य गुण के मूल्य को कई गुना बढ़ाने की सामर्थ्य रखता है।"

चौधरी चरण सिंह द्वारा रचित कृतियां

शिष्टाचार, १९४१. (२०१ पृष्ट)

हाउ टू एबोलिश जमींदारीः ह्विच एल्टरनेटिव सिस्टम टू एडाप्ट। (ज़मींदारी उन्मूलन कैसे करें: किस वैकल्पिक प्रणाली को अपनाएं) १९४७. इलाहाबादः सुपरिन्टेन्डेन्ट प्रिंटिंग एंड स्टेशनरी, संयुक्त प्रांत।

एबोलिशन ऑफ ज़मींदारीः टू अल्टरनेटिव्ज। (जमींदारी उन्मूलनः दो विकल्प) १९४७. किताबिस्तान, इलाहाबाद. (२६३ पृष्ट)

एबोलिशन ऑफ जमींदारी इन यू० पी०: क्रिटिक अंसरड। (उत्तर प्रदेश में जमींदारी उन्मूलनः आलोचकों को जवाब) १९४९. इलाहाबादः सुपरिन्टेन्डेन्ट प्रिंटिंग एंड स्टेशनरी, संयुक्त प्रांत।

व्हितहर कोआपरेटिव फार्मिंग? (सामूहिक खेती की दिशा?) १९५६. इलाहाबादः सुपरिन्टेन्डेन्ट प्रिंटिंग एंड स्टेशनरी, उत्तर प्रदेश।

एग्रेरियन रिवोल्यूशन इन उत्तर प्रदेश। (उत्तर प्रदेश में कृषि क्रांति) १९५७. प्रकाशन शाखा, सूचना विभाग, गवर्नमेंट ऑफ उत्तर प्रदेश १९५८ लखनऊ, सुपरिन्टेन्डेन्ट, प्रिंटिंग एंड स्टेशनरी, उत्तर प्रदेश। (६६ पृष्ट)

जॉइंट फार्मिंग एक्स–रैडः द प्रॉब्लम एंड इट्स सोल्यूशन। (संयुक्त खेतीः समस्या और समाधान) १९५९. किताबिस्तान, इलाहाबाद. (३२२ पृष्ट)

इण्डियाज पॉवर्टी एण्ड इट्स सोल्यूशन। (भारत की गरीबी और उसका समाधान) १९६४. एशिया पब्लिशिंग हाउस, बम्बई। (५२७ पृष्ट)

इण्डियन इकोनॉमिक पॉलिसीः दि गांधियन ब्लूप्रिंट। (भारत की अर्थनीतिः एक गांधीवादी रूपरेखा) १९७८. विकास पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली। (१२७ पृष्ट)

इकोनॉमिक नाइटमेयर ऑफ इण्डियाः इट्स कॉज़ एण्ड क्योर। (भारत की भयावह आर्थिक स्तिथिः कारन एवं निदान) १९८१. नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली। (५९८ पृष्ट)

लैण्ड रिफॉर्म्स इन यू० पी० एण्ड दि कुलक्स। (उत्तर प्रदेश में भूमि सुधार एवं कुलक वर्ग) १९८६. विकास पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली। (२२० पृष्ट)

'विशिष्ट रचनाएंः चौधरी चरण सिंह' भारत के भूतपूर्व प्रधानमंत्री श्री चरण सिंह द्वारा १९३३ और १९८५ के बीच लिखित २२ महत्वपूर्ण लेखों और भाषणों का संग्रह है। इस पुस्तक के अध्ययन से आज का पाठक वर्ग जान सकेगा कि मौजूदा समय की चुनौतियां न तो नई हैं और न ही समाधानहीन। इनसे निपटने के लिए एक मन–सोच अथवा जिगरा चाहिए, जो निश्चय ही धरा–पुत्र चरण सिंह में था। उनका लेखन उस प्रकाशस्तंभ की तरह है जो समुद्र में भटके हुए जहाजों को किनारे तक आने का रास्ता दिखाता है। उनके लेखन के आलोक में हम मौजूदा चुनौतियों को सही परिप्रेक्ष्य में न केवल समझ सकते हैं अपितु उनका समाधान भी पा सकते हैं। इन लेखों में उनकी राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक दृष्टि के दर्शन होते हैं। विषयवस्तु की दृष्टि से इन लेखों को सामाजिक लेखन, आर्थिक लेखन, राजनीतिक लेखन एवं उपसंहार – चार खण्डों में विभाजित किया गया है।

चौधरी चरण सिंह की अध्यात्मिक अंतश्चेतना और राजनीतिक मेधा महर्षि दयानन्द सरस्वती एवं महात्मा गांधी से अनुप्रेरित रही, तो सरदार पटेल उनके नायक रहे। इन विभूतियों पर चौधरी साहब ने अपने विचार लेखों में प्रस्तुत किये हैं। जाति–प्रथा, आरक्षण, जनसंख्या नियंत्रण, राष्ट्रभाषा जैसे सामाजिक मुद्दों के साथ ही शिष्टाचार जैसे विरल विषय पर भी दो लेख **खण्ड एकः सामाजिक लेखन** में दिये गये हैं।

चौधरी साहब भारत की उन्नति का मूल आधार कृषि, हथकरघा और ग्रामीण भारत को मानते थे। उनकी दृष्टि में ग्रामीण भारत ही वह नियामक तत्व रहा जिसे प्रमुखता देकर देश को आर्थिक रूप से सशक्त बनाया जा सकता है, साथ ही बेरोजगारी जैसी विकट समस्या को भी दूर किया जा सकता है। उत्तर प्रदेश में भूमि सम्बंधी सुधारों और जमींदारी समाप्त करने को लेकर चौधरी चरण सिंह पर धनी किसानों के पक्षधर होने के आरोप विरोधियों ने लगाये। उनका उन्होंने बेहद तार्किक ढंग से उत्तर दिया है। गांव–किसान और खेती के प्रति उपेक्षापूर्ण नीतियां एवं काले धन की समस्या जैसे तथा उपरोक्त विषयों पर केन्द्रित लेख **खण्ड दोः आर्थिक लेखन** के अन्तर्गत दिये गये हैं।

खण्ड तीनः राजनीतिक लेखन के अन्तर्गत भारत की लम्बी गुलामी के मूल कारणों का विश्लेषण, गांधी–चिंतन, देश में पहली गैर–कांग्रेसी जनता पार्टी की सरकार की आधारभूत नीतियां, देश विख्यात माया त्यागी कांड का समाजशास्त्रीय विश्लेषण, भाषा आधारित राज्यों के खतरे आदि मुद्दों के अलावा उनके नायक सरदार पटेल की स्मृति पर आधारित लेख हैं। इसी खण्ड में चौधरी साहब के ऐतिहासिक महत्व के दो भाषण भी संकलित हैं, जो लोकशाही पर संकट और राष्ट्रीय विघटन के खतरों के प्रति सचेत करते हैं।

अंतिम **खण्ड चारः उपसंहार** है, जिसमें चौधरी साहब ने राजनीति, समाज नीति और देश से सम्बंधित अधिकतर मुद्दों पर संक्षेप में अपने विचार प्रस्तुत किये हैं।

Charan Singh Archives
www.charansingh.org

मूल्य ₹६६